कृषि विपणन का अर्थ

"कृषि विपणन से अर्थ उन सभी क्रियाओं से लगाया जाता है जिनका सम्बन्ध कृषि उत्पादन का कृषक के यहाँ से अन्तिम उपभोक्ता तक पहुँचाने में किया जाता है।"[1] इन क्रियाओं में कृषि उपज को एकत्रित करना, उनका श्रेणीकरण एवं प्रमापीकरण करना, उन्हें बेचने के लिए मण्डियों व बाजारों तक ले जाना तथा उनकी बिक्री करना भी शामिल हैं।

भारत में कृषि विपणन की वर्तमान व्यवस्था

वर्तमान समय में कृषि उपज के विपणन के लिए निम्न व्यवस्था पायी जाती है :

(1) **गाँवों में बिक्री**—किसान अपनी उत्पत्ति का बहुत बड़ा भाग गाँवों में ही साहूकारों, महाजनों, बनियों, घूमते-फिरते व्यापारियों, पैंठों व हाटों में ही बेच लेते हैं। **किसान द्वारा गाँवों में ही बिक्री कई कारणों से की जाती है; जैसे** (i) गाँवों के साहूकार या बनिये का ऋणी होना, (ii) पहले से ही विक्रय का सौदा कर लेना, (iii) धन की तुरन्त आवश्यकता होना, (iv) परिवहन साधनों का अभाव, (v) मण्डियों की कुरीतियों से बचना, लेकिन वर्तमान में परिवहन के साधनों के विकास, नियमित मण्डियों में वृद्धि, सहकारी विपणन की जानकारी, गाँव विकास एवं चेतना तथा साहूकारों के प्रभाव में कमी होने से कृषि वस्तुओं की गाँवों में बिक्री में कुछ कमी आ गयी है।

(2) **मेलों में बिक्री**—भारत मेलों के लिए सुप्रसिद्ध है। यहाँ लगभग 1,700 मेले कृषि पदार्थ व जानवरों के लगते हैं जिनमें लगभग 40 प्रतिशत मेले कृषि वस्तुओं के होते हैं जो मुख्य रूप से बिहार व उड़ीसा में पाये जाते हैं। मेलों के स्थानों के आस-पास के कृषक इन्हीं में अपनी उत्पत्ति को बेच लेते हैं।

(3) **मण्डियों में बिक्री**—मण्डियों से अर्थ उन स्थानों से है जहाँ थोक मात्रा में कृषि वस्तुओं का क्रय एवं विक्रय होता है। यह मण्डियाँ शहरी क्षेत्रों या कस्बों में होती हैं। इस समय यह मण्डियाँ दो प्रकार की हैं—(i) अनियमित मण्डी, (ii) नियमित मण्डी।

अनियमित मण्डियों के बिक्री के नियम निश्चित नहीं होते हैं तथा बिक्री आढ़तिया के माध्यम से होती है। किसान अपनी गाड़ी दुकानदार के यहाँ खड़ी करता है। इस दुकानदार को आढ़तिया कहते हैं। यह आढ़तिया दलालों के माध्यम से उत्पत्ति को बेच देता है जिसकी तुलाई तौला द्वारा की जाती है। यह आढ़तिया बिक्री मूल्य में से अपनी आढ़त व अन्य खर्चे काटकर शेष राशि का भुगतान किसान को कर देता है। जब तक उत्पत्ति नहीं बिकती है तब तक वह आढ़तिया के यहाँ रखी रहती है। इस बीच यदि किसान को धन की आवश्यकता होती है तो उसको आढ़तिया के द्वारा कुछ धन दे दिया जाता है जिसको अन्त में हिसाब करते समय काट लिया जाता है।

नियमित बाजारों की स्थापना राज्य सरकार के नियमों के अनुसार होती है जहाँ पर उत्पत्ति बेचने के निर्धारित नियम होते हैं। सामान्यतया यहाँ किसान से कुछ भी व्यय वसूल नहीं किया जाता है। सारे व्यय

1 "Agricultural Marketing comprises all operations involved in the movement of farm produce from the producer to the ultimate consumer."

Scanned with CamScanner

क्रेता से ही वसूल किये जाते हैं। किसान यहाँ पर अपना उत्पादन लाकर टिन शेडों में रख देता है जहाँ उसकी बिक्री सामान्यतया नीलामी के आधार पर होती है तथा बिक्री मूल्य माल उठाते ही मिल जाता है।

(4) **सहकारी समितियों के माध्यम से बिक्री**—देश में इस प्रकार की समितियों में वृद्धि हो रही है। यह समितियाँ अपने सदस्यों से कृषि उत्पादन एकत्रित करती हैं और फिर उसको ले जाकर बड़ी-बड़ी मण्डियों में बेचती हैं। ऐसा करने से उनके सदस्यों को अपनी उत्पत्ति का अच्छा मूल्य मिल जाता है।

(5) **सरकारी खरीद**—पिछले कुछ वर्षों से सरकार द्वारा भी कृषि उत्पत्ति को क्रय किया जा रहा है। इसके लिए सरकार स्थान-स्थान पर कुछ क्रय केन्द्र स्थापित कर देती है जहाँ पर किसान अपनी उत्पत्ति लाकर निर्धारित मूल्य पर बेच सकते हैं। सरकार यह खरीद (i) स्वयं अपने कर्मचारियों के माध्यम से, (ii) सहकारी समितियों के माध्यम से व (iii) भारतीय खाद्य निगम के माध्यम से करती है।

(6) **फुटकर विक्रेताओं के माध्यम से बिक्री**—कृषि वस्तुओं के फुटकर विक्रेता शहरों के भिन्न-भिन्न भागों में फैले रहते हैं जिन्हें कभी-कभी सीधा विक्रय किसानों के द्वारा कर दिया जाता है।

कृषि उपज के विपणन में दोष

अथवा

कृषि उपज बेचते समय कृषक की कठिनाइयाँ

भारत में कृषि विपणन के सम्बन्ध में बहुत से दोष दूर हो गये हैं, लेकिन फिर भी कुछ दोष अभी पाये जाते हैं जो निम्नलिखित हैं, इन्हीं को कृषि उपज बेचते समय कृषक की कठिनाइयाँ भी कहते हैं :

(1) **मध्यस्थों की अधिकता**—भारत में कृषि उपज के विपणन में कृषकों एवं उपभोक्ताओं के बीच मध्यस्थ की एक लम्बी शृंखला है जिसमें गाँव का साहूकार, महाजन, घूमता-फिरता व्यापारी, कच्चा आढ़तिया, पक्का आढ़तिया, थोक व्यापारी, मिल वाला, दलाल, निर्यातकर्ता, फुटकर व्यापारी, आदि शामिल हैं। इन सभी के द्वारा कुछ लाभ अवश्य लिया जाता है जिसका प्रभाव यह होता है कि उपभोक्ता द्वारा दिये जाने वाले मूल्य का एक महत्वपूर्ण भाग यह मध्यस्थ ले लेते हैं।

(2) **मण्डियों की कुरीतियाँ**—देश में अभी भी बहुत-सी मण्डियाँ नियमित नहीं हैं। इन अनियमित मण्डियों द्वारा बहुत-सी कपटपूर्ण कार्यवाहियाँ की जाती हैं जिससे किसान को एक प्रकार से लूटा जाता है : (i) यहाँ तराजू-बाट में गड़बड़ी की जाती है। (ii) उपज का एक अच्छा अंश नमूने या बानगी के रूप में निकाल लिया जाता है। (iii) मूल्य आढ़तिया व क्रेता का दलाल तय करता है। किसान को विश्वास में नहीं लिया जाता है। (iv) दलाल सदा ही क्रेता का पक्ष लेकर कार्य करता है। (v) विवाद की स्थिति में किसान के हितों की रक्षा करने वाला मण्डियों में कोई नहीं होता है। इस प्रकार यह कृषि विपणन का दोष है।

(3) **बाजार व्ययों में बाहुल्य**—अनियमित मण्डियों में किसानों से बहुत-से व्यय लिये जाते हैं; जैसे आढ़त, तुलाई, दलाली, पल्लेदारी, आदि। इन व्ययों के अतिरिक्त और भी व्यय वसूल किये जाते हैं; जैसे धर्मादा, गौशाला, रामलीला, धर्मशाला, महतर, मुनीम, करदा, आदि।

(4) **श्रेणीकरण व प्रमापीकरण का अभाव**—भारतीय मण्डियों में जो कृषि पदार्थ बिकने के लिए आते हैं वे प्रायः अवर्गीकृत व अप्रमाणित होते हैं। बहुत-से किसान जान-बूझकर मिट्टी या अन्य ऐसी ही मिलावट करके वस्तु को बेचने के लिए लाते हैं जिसका परिणाम यह होता है कि किसान को अपनी उपज का मूल्य कम ही मिलता है। भारत में उन संस्थाओं की भी कमी है जो प्रमापीकरण व श्रेणीकरण कर सकती हैं।

(5) **भण्डार सुविधाओं का अभाव**—भारत में ऐसे भण्डारों की भी कमी है जहाँ पर किसान अपनी उपज को कुछ समय के लिए रख सके और भाव अपने हित में आने तक प्रतीक्षा कर सके। गाँवों में किसान की जो अपनी निजी भण्डार सुविधाएँ हैं उनमें खत्ती, कोठे, मिट्टी व बाँस के बने बर्तन, आदि हैं जिनमें कीटाणुओं व सीलन, आदि से उत्पत्ति की सुरक्षा नहीं हो पाती है। ऐसी स्थिति में किसान को अपनी उत्पत्ति को शीघ्र ही बेचने के लिए बाध्य होना पड़ता है।

(6) **परिवहन सुविधाओं का अभाव**—कृषि वस्तुओं के विपणन में परिवहन सुविधाओं का अभाव भी एक महत्वपूर्ण घटक है। गाँव व शहर को जोड़ने वाली सड़कें कच्ची हैं जो वर्ष में कुछ महीने ही कार्य करती हैं। वर्षा के मौसम में तो यह सड़कें बिल्कुल ही बेकार हो जाती हैं। इसके साथ-साथ किसान के पास परिवहन

Scanned with CamScanner

साधन जैसे ऊँट, गधा, खच्चर, आदि की गाड़ी का भी अभाव है। यह साधन महँगे पड़ते हैं, समय भी अधिक लगता है तथा कृषि वस्तुओं का क्षय भी होता है।

(7) **मूल्य सम्बन्धी सूचनाओं का अभाव**—कृषि पदार्थों के विपणन में एक दोष मूल्य सम्बन्धी सूचनाओं का अभाव है। किसानों को कृषि पदार्थों के मूल्य की जानकारी नहीं हो पाती है, क्योंकि गाँवों में समाचार-पत्र बहुत ही कम पहुँच पाते हैं साथ ही अधिकांश कृषक अनपढ़ होने के कारण समाचार-पत्रों को पढ़ने में असमर्थ रहते हैं। प्रायः वे महाजन द्वारा बताये गये मूल्यों पर विश्वास कर लेते हैं जो शायद ही इनको उचित मूल्य बताते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि किसान गाँव में ही अपनी उपज को बेच लेता है।

(8) **वित्तीय सुविधाओं का अभाव**—कृषि पदार्थों के विपणन में दोष यह है कि किसान को वित्तीय सुविधाएँ देने वाली संस्थाओं का अभाव है जिसके परिणामस्वरूप इनको फसल कम मूल्यों पर फसल आने से पूर्व ही बेचने के लिए बाध्य होना पड़ता है।

(9) **उपज की घटिया किस्म**—खेतों के छोटे होने, उपज की परम्परागत पद्धति होने, अच्छे बीज एवं खाद व सिंचाई का अभाव होने से कृषक की उपज घटिया किस्म की होती है। साथ ही फसल को काटने में असावधानी करने से उपज में धूल व मिट्टी मिल जाती है। इन सबका सामूहिक परिणाम यह होता है कि उपज घटिया किस्म की होती है जिससे कृषक को उसका मूल्य कम ही मिल पाता है।

(10) **कृषि आधिक्य का कम होना** (Low Agricultural Surplus)—उत्पादन में से वर्ष भर खाने के लिए व आगामी कृषि हेतु बीज रखने के बाद जो बचता है उसे हम कृषि आधिक्य कहते हैं। यह कृषि आधिक्य छोटी जोतें होने के कारण बहुत ही थोड़ी मात्रा में होता है जिसे वह गाँव में ही इस कारण से बेच लेता है कि उसे बाजार में ले जाने में आनुपातिक दृष्टि से व्यय अधिक करना पड़ता है।

(11) **संगठन का अभाव**—भारतीय कृषक देश के दूर-दूर स्थानों तक फैले हुए हैं। साथ ही वे आर्थिक व सामाजिक दृष्टि से पिछड़े हुए हैं। इन सबके परिणामस्वरूप वे किसी शक्तिशाली संगठन का निर्माण नहीं कर पाये हैं। इस प्रकार फसल बेचते समय व्यापारी उनको दबा लेते हैं और कम मूल्य पर बेचने के लिए विवश कर देते हैं।

Scanned with CamScanner